HISTORY OF RORS

इतिहास (इति+अ+हास) यानि कि ऐसा निश्चय पूर्वक ही हुआ था। एक अंग्रेज लेखक स्टूवर्ट का कहना है कि अगर आप किसी कौम या देश पर राज्य करना चाहते हो तो आप सबसे पहले उसके स्वाभिमान पर चोट करो और उसको उसके गौरवशाली इतिहास से काट दो। चाणक्य नीति कहती है कि ‘‘ जो कौम अपने इतिहास से कट गई उसका अन्त निश्चित है।’’ इसीलिए इतिहास के महत्व को एक स्वाभिमानी व्यक्ति ही समझ सकता है। जिस व्यक्ति ने स्वार्थ की मण्डी में अपनी जमीर बेच खाई हो और जिसके क्षत्रित्व को वक्त की दीमक ने चाट खाया हो उस व्यक्ति की इतिहास में उतनी ही रूचि होती है जितनी की एक गंजी की नालों के बाजार में होती है। व्यक्ति, कौम या देश अपने गौरवशाली इतिहास से प्रेरणा लेकर सफलता की बुलंदियों तक पहुंच सकता है। निश्चित रूप से इतिहास समाज व देश को जिंदा रखने के लिए संजीवनी बूटी से कम नहीं।

जहाँ तक रोड़ बिरादरी के इतिहास की बात है तो ऐसा नहीं है कि पहले इस बारे में कभी कोई प्रयास न हुए हों। चौ. ईश्वर सिंह पूर्व विधानसभाध्यक्ष, हरियाणा एवं चौ. शिवराम वर्मा पूर्व मंत्री, हरियाणा सरकार ने सतर के दशक में इस बारे में भरसक प्रयास किए। जिसके तहत सुलतान जागे भाट को पूर्ण रिकार्ड सहित बुलवाया था, जिसने 15 दिन रोड़ धर्मशाला करनाल और ढाई महीने जनता हाई स्कूल कौल में रह कर, रोड़ बिरादरी के हर परिवार की वंशावली पर गहन अध्ययन किया था। रोड़ बिरादरी के जो छात्र उस समय जनता कालेज, कौल में शिक्षा ग्रहण कर रहे थे; उन्होंने भी इस कार्य में मदद की थी। वह भी अच्छी तरह जानते हैं कि उस समय किसी भी परिवार की 7-8-9 पीढ़ी से ज्यादा वंशावली नहीं पाई गई थी। कुछ स्वंयम्भू इतिहासकारों ने भी रोड़ जाति का इतिहास रूरू नामक व्यक्ति से जोड़ते हुए महाभारत कालीन बताया है। किसी ने रोड़ों को पृथ्वीराज का साथी बताया; किसी ने अकबर के समय में होना बताया। लेकिन जो प्रत्यक्ष है, उसके साथ वह तालमेल नहीं बैठा पाए, क्योंकि कुछ ऐसे प्रश्न हैं, जिनका जवाब एक प्रबुद्ध समाज को देना पड़ता है और वह प्रत्युतर तार्किक हो ताकि सुनने वाला सतुंषट हो सके। वह प्रश्न कुछ इस प्रकार से बनते हैं।

1. अगर रोड़ जाति महाभारत काल से है तो ‘आईने अकबरी’ जिसमें मुगलकालीन समय में मुगलों के अधीन भारतीय जातियों के नाम वर्णित हैं। (Vol-2 Library Kurukshetra University में किताब उपलब्ध है) रोड़ जाति का उसमें नाम नहीं है, जबकि आईने अकबरी के Vol-3 में उन सभी जातियों का वर्णन है, जो उस समय खेती करती थी और लगान दिया करती थी। उस तालिका में भी रोड़ जाति का नाम नहीं है। जबकि अहर, कौल, अमीन आदि गांवों के नाम उसमें वर्णित हैं, परन्तु रोड़ों के सिवाय अन्य सभी जातियों का नाम इन गाँवों में वर्णित है। इसी संदर्भ में एक प्रश्न और

उभर कर आता है कि सौरभ रिकार्ड के अनुसार यदि अमर सिंह रोड़, अकबर के दरबार में पेश हुआ बताया गया है तो रोड़ जाति का जिक्र क्यों नहीं आया जबकि उस समय कि छोटी से छोटी संख्या वाली जाति का नाम भी उसमें दर्ज है। (तीन हजार से भी ऊपर जातियों के नाम आईने अकबरी में अंकित हैं और यह अकबर के समय का राजकीय रिकार्ड है)

(2) अंग्रेजी राज्य के समय के रिकार्ड इम्पीरियल गजट (Vol-15.1908 पेज 51 राजकीय रिकार्ड) में साफ लिखा है कि रोड़ों को जमीनें राजपूतों के वंशज प्रमाणित करवाने पर सन् 1883 में आबंटित की गई, जब पक्का बंदोबस्त प्रक्रिया चली थी। (1880-1904)

(3) रोड़ों का फैलाव पिपली से उत्तर की ओर बिलकुल भी नहीं है, मानों कि लक्ष्मण रेखा खींच दी गई हो।

(4) रोड़ बिरादरी का हर बच्चा यह स्वाभिमान लेकर पैदा होता है कि हम उनमें से हैं जिनके पूर्वजों ने अपनी बेटी का डोला मुस्लिम शासक को नहीं दिया था बल्कि उजड़ना बेहतर समझा था। लेकिन सभी इस बात से अनभिज्ञ थे कि किस शासक ने डोला मांगा, कब मांगा व किस से मांगा था।

(5) रोड़ धर्मशाला कुरूक्षेत्र में चौ. ईश्वर सिंह के समय में राजा रोड़ की एक तस्वीर लगाई गई थी, यहां प्रश्न यह है कि राजा रोड़ की जाति क्या थी क्योंकि राजा रोड़ तो उसका नाम है और राजा रोड़ कब हुआ तथा वह किस रियासत का राजा था?

(6) अब प्रश्न यह उठता है कि सरकारी रिकार्ड के अनुसार रोड़ों को जमीने राजपूतों का वंशज प्रमाणित करवाने पर मिली, हम राजपूत कब थे? राजपूतों से रोड़ बनने के लिए जिस घटना हमें मजबूर किया? वह घटना क्या थी? तथा वर्तमान समय में रोड़ बिरादरी के आस-पास की राजपूत कौ

अछूती कैसे रही?

(7) हमारे पूर्वजों ने किन्हीं कारणवश जब अपनी जाति का बदलाव रोड़ के रूप में किया, तब हम क्या थे और उन्होंने रोड़ शब्द का ही चयन क्यों किया?

(8) पिछले कई वर्षों से B.A. PART-1 के इतिहास में (Kurukshetra University) Dr. K.C. Yadav द्वारा लिखी गई 'हरियाणा का इतिहास' नामक पुस्तक में यह स्पष्ट तौर पर पढ़ाया जा रहा है कि 18वीं सदी से पहले वर्तमान हरियाणा क्षेत्र में रोड़ नहीं थे और 18वीं सदी की उथल-पुथल (जोकि 1761 से 1803 का समय है) में रोड़ जाति प्रथम बार प्रकट हुई और रोड़ों का प्रमुख केन्द्र अमीन गाँव था। (**अध्याय-23,पृष्ठ संख्या-430, प्रथम संस्करण-1982**)

HISTORY OF RORS

रोड़ बिरादरी के किसी भी बुद्धिजीवी या प्रतिनिधि ने Kurukshetra University या Haryana Govt. से जाकर यह विरोध प्रकट क्यों नहीं किया कि रोड़ बिरादरी को 18वीं सदी का बताकर क्यों पढ़ाया जा रहा है? जबकि रोड़ बिरादरी तो अपने आप को इस क्षेत्र में हजारों वर्षों से स्थापित बता रहे हैं।

(9) रोड़ बिरादरी का हर व्यक्ति स्वयं अपने अन्दर झाँक कर देखे कि क्या वह अपने से बड़ा क्षत्रिय किसी अन्य को मानता है? जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि हमारे पूर्वजों ने अपनी कौम को शुद्ध रखने का भरसक एवं हर कीमत पर प्रयास किया, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण साटा प्रथा थी। लेकिन इतिहास के पन्नों में रोड़ जाति के नाम से कोई युद्ध लड़ा गया हो या क्षत्रियपन के प्रमाण स्वरूप इतिहास में कोई घटना दर्ज हो, ऐसा कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

हकीकत तो यह है कि **अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा** Regd.(H.O. MUMBAI) में सभी भारतीय क्षत्रिय जातियों का प्रतिनिधित्व है। लेकिन उसमें रोड़ जाति का कोई नाम नहीं हैं यदि रोड़ जाति क्षत्रिय है तो फिर **अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा** Regd. में रोड़ जाति का नाम क्यों नही है?

(10) यह सर्वविदित है कि मुगल शासक औरंगजेब ने अपने शासनकाल में एक मुहिम चलाई थी, लालच देकर, भय दिखाकर व जबरदस्ती से हिन्दुओं को मुसलमान बनाया गया था। रोड़ों के समकक्ष जितनी भी जातियां हैं; सब में थोड़े या बहुत मुसलमान बने हुए जरूर मिलेगें। लेकिन रोड़ों में कोई भी रोड़ मुसलमान नहीं मिलेगा। इसका एक ही मतलब है कि या तो औरंगजेब के समय में रोड़ जाति ही नहीं थी या फिर यह जाति उसके दबाव में नहीं आई। यदि रोड़ बिरादरी औरंगजेब के दबाव में न आकर उससे टक्कर लेती तो यह स्वाभाविक है कि उसका जिक्र इतिहास में अवश्य होता, जोकि नहीं है।

इन सभी ज्वलन्त प्रश्नों का सर्वमान्य एवं तार्किक ढंग से जो उत्तर बनता है। वही रोड़ बिरादरी का इतिहास बनता है।

रोड़ बिरादरी का इतिहासः-

सन् 1192 में जब पृथ्वीराज चौहान मौहम्मद गौरी से हार गया और पकड़ा गया तो इतिहासकारों के कथनानुसार मौहम्मदगौरी उसे अपने साथ गजनी ले गया, तब वह दिल्ली के तख्त पर अपने गुलाम कुतुबुदीन ऐबक को अपने प्रतिनिधि के रूप में बैठा कर गजनी चला गया। मौहम्मद गौरी की मृत्यु उपरान्त सन् 1206 में कुतुबुदीन ऐबक ने अपने आपको खुद मुख्तयार दिल्ली का सुलतान घोषित कर दिया, जिसको इतिहास में गुलाम वंश का संस्थापक कहा जाता है।

HISTORY OF RORS

कुतुबुदीन ने अपने राज्य की सीमाओं के प्रसार की नीति के तहत आस-पास के राजाओं को अपने अधीन करना शुरू किया। कुतुबुदीन ऐबक ने अन्य शासकों को अपने अधीन करने के दो तरीके अपनाए, या तो वे राजा सीधी जंग स्वीकार करें या अपनी बेटी का डोला देकर अधीनता स्वीकार करें व अन्य प्रकार की अनेक बेगारें भी स्वीकार करें। उस वक्त स्थानीय राजपूत राजाओं में तीन प्रकार की विचारधारायें कार्य कर रही थी।

(1) डोला देकर सन्धि करना व अपनी जागीरें सलामत रखना ही समझदारी है।

(2) अपने मान-सम्मान, बहु-बेटी की ईज्जत का किसी भी कीमत पर सौदा नहीं करना और वह युद्ध स्वीकार कर वीरगति को प्राप्त हुए एवं राजपूत वीरागंनाओं ने अपनी आन-शान को बचाने हेतू अग्नि का आलिंगन किया।

(3) तीसरी विचारधारा में वह स्थानीय शासक थे जिन्होंने यह पाया कि दुश्मन की जंगी ताकत हमसे ज्यादा है और उससे जीत पाना सम्भव नही है और हारने पर अपनी व अपनी प्रजा की रोटी, बेटी दोनों ही सुरक्षित नहीं है, इसलिए उन्होंने प्रजा सहित अपने स्थानों से अन्य सुरक्षित क्षेत्रों में पलायन करना ही उचित समझा।

तीसरी विचारधारा की कड़ी में ही राजा रोड़ का नाम आता है, जिसके बारे में लार्ड कनिंघम, कार्ल लाईल, इबैसटन आदि ने और मराठों का इतिहास तथा भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण रिपोर्ट में भी साफ लिखा है कि तेहरवीं सदी के प्रारम्भ में राजपूत क्षत्रिय **राजा रोड़** जिसके पिता का नाम **खरगंड़** और सत्ता का केन्द्र खगरोड़ था (जो कालान्तर में **खगरोल** व वर्तमान समय में **कगरोल** के नाम से जाना जाता है)। राजा रोड़ की रियासत 52 गढ़ियों की रियासत थी जो आगरा तथा आज के राजस्थान के बीच के क्षेत्र के मध्य स्थित थी। यह सारा इलाका उस समय राजपूताना कहलाता था। कुतुबुदीन ऐबक के डोला मांगने के कारण, राजा रोड़ प्रजा सहित वर्षा ऋृ तु में अपनी 52 गढ़ियां खाली करके चला गया और वह 52 गढ़ियां कगरोल के आसपास वर्तमान समय में खंडहरों के अवशेष के रूप में आज भी मौजूद हैं।

अब सामान्य बुद्धि का आदमी भी यह सहज अनुमान लगा सकता है कि उस समय में राजा रोड़ अधिक सुरक्षित क्षेत्र की ओर ही गया होगा, क्योंकि उत्तर क्षेत्र में तो मुस्लिम शासक का विस्तारवादी दबदबा था।

अब राजा रोड़ व उसकी प्रजा ने दक्षिण क्षेत्र के पश्चिमी घाटों के क्षेत्रों में अपने आपको स्थापित कर खेती-बाड़ी का कार्य करना शुरू किया और कालान्तर में स्थानीय राजाओं की सेना में भर्ती होकर अपने क्षत्रियपन के जौहर दिखाकर सेना में उच्च्य पदों पर आसीन हुए और इनके को देखकर स्थानीय राजाओं ने इनको मर+हठा=मराठा (जिसका मतलब अपनी हठ पर मर जाए पर मरते दम तक पीछे ना हटें) के नाम से सम्बोधित करना प्रारम्भ कर दिया तथा इनको मराठा की उपाधि से नवाजना शुरू किया

जिसके परिणाम स्वरूप 16वीं शताब्दी में राजपूतों से मराठा जाति की उत्पत्ति हुई, ऐसा इतिहासकारों द्वारा बताया जाता है। उसी मराठा जाति में मालो जी, मालो जी के शाह जी और शाह जी के शिवाजी पैदा हुए। इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण घटना में शाह जी द्वारा अपने पुत्र शिवाजी को समझाते हुए यह बताया गया है कि बेटा मेरे दादा जी हल चलाया करते थे। हमने जो यह रूतबा पाया है यह हमने अपने जौहर एवं मेहनत से पाया है। इसलिए आपको हमसे भी आगे जाना है।

जो हमारे तथाकथित बुद्धिजीवी भाई यह कहते हैं कि शिवाजी एक नीच जाति से सम्बंधित थे, उनसे हमारा विनम्र अनुरोध है कि वे किसी भी जाति को नीच व हीन न समझें, क्योंकि नीच व हीन तो व्यक्ति या जाति अपने विचारों एवं कार्यों से ही होती है। 1665 में शाह जी (शिवाजी के पिता जी) द्वारा लिखी हुई चिट्ठी जो उन्होंने आदिल शाह को लिखी थी और जो इतिहास के पन्नों में हुबहू दर्ज है। उस चिट्ठी में शाह जी, आदिल शाह को साफ तौर पर लिखते हैं कि हम राजपूत क्षत्रिय हैं और हम बहुत से राजाओं की सेवा में रहे हैं, परन्तु हमने कभी भी अपने स्वाभिमान से समझौता नहीं किया। (संदर्भः The New Cambridge History of India, Vol.II-4 'The Marathas' written by Stewart Gordon-Chapter3, Pages87-88).

शिवाजी के बारे में यहाँ कुछ ब्यान करना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है। शिवाजी के बारे में सभी इतिहासकार एकमत हैं कि शिवाजी के पूर्वज 13वीं शताब्दी में मुसलमानों द्वारा तंग किए जाने के कारण राजपूताना से आकर पश्चिमी घाटों में बसे थे। (संदर्भः स्टीवार्ट गॉर्डन द्वारा लिखित, मराठा इतिहास; उपरोक्तः पृष्ठ 87-88) शिवाजी जैसी महान शख्सियत दुनिया के इतिहास में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। सभी जातियों, धर्मों व नारी विशेष का आदर करते हुए शिवाजी ने कम से कम खून बहाकर उस वक्त हिन्दू राज्य कायम किया जिस समय दिल्ली की गद्दी पर क्रूर मुगल शासक औरंगजेब का राज्य था। जिसमें हिन्दू बना रहना ही मुश्किल था।

शिवाजी ने अपने समय में मराठा जाति का विस्तार किया और बुद्धिमता से काम लेते हुए मराठा जाति में श्रेणियाँ बना दी और साथ में सबको संगठित एवम् अनुशासन में रखने के लिए यह शर्त भी रख दी कि बड़ी श्रेणी के मराठा की बात छोटी श्रेणी का मराठा मानेगा। सन् 1674 में शिवाजी ने अपने आपको राजपूत श्रत्रिय प्रमाणित करवाकर ही छत्रपति की उपाधि धारण की थी।

अब मराठा जाति के बारे में हम उन भाईयों से भी अनुरोध करना चाहते हैं जो अपने आपको इतिहासकार कहते हैं और यह बताते हैं कि मराठा नाम की कोई जाति ही नहीं है, यह तो एक स्थान विशेष का नाम है। वो G.Sir Desai की किताबः- **मराठों का नवीनत्तम इतिहास 1972 संस्करण** पढ़ें।

इस पुस्तक की भूमिका में ही लेखक लिखता है “ वैसे तो हरेक जाति का अपना एक विशेष गुण होता है लेकिन पूरे भारतवर्ष में केवल मराठा जाति ही एक ऐसी जाति है जो यह दावा कर सकती है कि राष्ट्र के निर्माण में हमारा विशेष योगदान है।”

हम उन भाईयों से भी अनुरोध करना चाहते हैं जो मराठों को लुटेरा बताकर कलंकित करने की कुचेष्टा करते हैं, वे Justice Rana Dey की किताब **मराठों का उत्कृष्ट युग** पढ़ें जिसमें लेखक लिखता है कि 1710 से 1760 तक के वर्षों का समय, मराठों का ऐसा समय रहा है कि जब राजकार्यों में मराठों की सलाह ली जानी जरूरी थी जैसे कि जयपुर की गद्दी पर कौन बैठेगा, अवध का नवाब कौन होगा व दिल्ली की गद्दी पर कौन बैठेगा, यह मराठे ही तय करते थे व उनको सुरक्षा की गारन्टी भी मराठे ही देते थे तथा बदले में चौथ (1/4) भी वसूलते थे।

उत्तर भारत के स्थानीय शासक, मराठों की चौथ वसूलने व दबदबे से ईष्या रखते हुए मराठों की ताकत को कमजोर करने के उद्देश्य से, उस समय के अफगान शासक अहमदशाह अब्दाली से जा मिले और मराठों के विरूद्ध युद्ध करने के लिए दिल्ली की गद्दी का लालच देकर उसे आमन्त्रित कर आए। जब इस सारे षड़यंत्र का पता मराठों को चला तो वे अपनी सारी सैन्य शक्ति लेकर, अहमदशाह अब्दाली से युद्ध करने के लिए वर्तमान समय के कुरूक्षेत्र तक आ पहुँचे। पानीपत युद्ध की पृष्ठिभूमि व उस वक्त रचे गए सारे षड़न्त्र जो मराठों के खिलाफ रचे गए, घटनाक्रम की विस्तृत जानकारी के लिए वृन्दावन लाल वर्मा कृत The Great Marathas(जिस पर आधारित The Great Marathas नाम का टी.वी. धारावाहिक भी प्रसारित हो चुका है) पढ़ें। संक्षेप में यह विचारणीय तथ्य है कि मराठा सेना के बड़े ओहदेदारों (योद्धाओं) के साथ उनकी पत्नियां भी आई थीं जो लड़ाई से पहले कुरूक्षेत्र में तीर्थ करने के प्रयोजन से ठहरी हुई थीं। इतिहासकार लिखते हैं कि अहमदशाह अब्दाली आसपास के शासकों की मदद लेने और मराठों में आपसी फूट का पता लगाने में सफल रहा। कुछ मराठा युद्ध के प्रारम्भिक दौर में ही वापस चले गए और उनकी पत्नियों को भरतपुर के शासक राजा सूरजमल तथा अवध के नवाब नजीबखां की सेना की देखरेख में कुरूक्षेत्र से सुरक्षित निकाल ले गए। बाकि बचे मराठों ने सेनापति सदाशिव भाऊ व राजा विश्वासराव के नेतृत्व में अहमदशाह अब्दाली के साथ पानीपत की तीसरी लड़ाई 1761 में लड़ी। 14 जनवरी 1761 को लड़ाई शुरू हुई। जिसमें इतिहासकार लिखते हैं कि मराठों की सेना कुरूक्षेत्र की ओर तथा अब्दाली की सेना दिल्ली की ओर खड़ी थी। 14 जनवरी साँय 4 बजे तक मराठों ने अहमदशाह अब्दाली की सेना के पाँव उखाड़ दिए थे। तभी अप्रत्याशित घटना घट गई, राजा विश्वासराव जो हाथी पर सवार था, को गोली लगी व राजा हाथी से नीचे गिर गया। जिसे देख सेनापति सदाशिव भाऊ अपने घोड़े से नीचे उतरकर राजा की मदद

के लिए गया। सेना ने समझा कि राजा व सेनापति दोनों ही मारे गए। इस कारण से मराठा सेना में भगदड़ मच गई और मराठा सेना की जीत हार में बदल गई (ठीक उसी तरह जिस प्रकार पानीपत की दूसरी लड़ाई में हेमू अपनी आँख में तीर लगने के कारण जीती हुई लड़ाई हार गया था)। परिणाम स्वरूप मराठा सेना अहमदशाह अब्दाली के घेरे में आ गई और मराठों का भीषण कत्लेआम हुआ। यहां विचारणीय बात यह है कि जीत के बाद भी अब्दाली ने दिल्ली में राज्य स्थापित क्यों नहीं किया? यह इस बात का साफ संकेत है कि आपसी फूट का फायदा उठाकर वह लड़ाई तो जीत गया परन्तु यह भय बना रहा कि मराठे फिर से एकत्रित होकर युद्ध के लिए लामबन्द न हो जाएं। इसीलिए वह वापिस अफगानिस्तान चला गया। कुछ मराठा योद्धा बचकर जंगलों में छुपते छिपाते कुरूक्षेत्र अपनी पत्नियों के पास पहुंचने में सफल हो गए। इससे पहले कि अहमदशाह अब्दाली कुरूक्षेत्र पंहुचता, वे मराठे अपनी स्त्रियों सहित कुरूक्षेत्र के दक्षिण में ढाक के जंगलों में अपने आपको छिपाने में सफल हो गए। यहाँ वृन्दावन लाल वर्मा लिखते हैं कि, **'संयोगवश कुछ बचे हुए मराठा अपने परिवारों सहित आज तक भी विलुप्त हैं'**

अब हम इतिहास की इन दोनों कड़ियों को आपस में जोड़ रहे हैं कि बचे हुए मराठा कुरूक्षेत्र के दक्षिण के ढाक के जंगलों में विलुप्त हो रहे हैं और 18वीं सदी के उत्तरार्ध की उथल-पुथल में रोड़ इन्हीं जंगलों से प्रकट हो रहे हैं। सन् 1761 से 1780 के बीच बचे हुए मराठे ढाक के जंगलों में अपनी पहचान छुपाकर मराठा से बदलकर (पहले कुछ दिन और, तथा अन्ततः रोड़) अपने पूर्वज राजा रोड़ की याद में अपनी पहचान रोड़ जाति के नाम से कर चुके थे, और सबसे पहले 1780 के आसपास गाँव अमीन, कुरूक्षेत्र में इनका रोड़ों के रूप में बसेरा हुआ तथा यह मुसलमानों के कहर से बचने के लिए छोटी-छोटी टुकड़ियों में पूरे ढाक के जंगलों में फैल गए। ब्रिटिश पुस्तकालय में उपलब्ध सामग्री में प्रकाशित उस समय की Topography देखें तो जहां-जहां उस समय ढाक के जंगल थे; वहां-2 ही वर्तमान समय में रोड़ों के गाँव पाए जाते हैं।

यहां यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब 1785 से 1795 के दौरान मराठों ने पुनः दक्षिण से उभरकर उत्तर क्षेत्रों में अपना दबदबा कायम किया तो उस समय यह छुपे हुए मराठा अपने मराठों से क्यों नहीं जा मिले या उन्होंने अपने विलुप्त भाईयों की तलाश क्यों नहीं की। इसके जवाब हेतू **वृन्दावन लाल वर्मा** की किताब पढ़ना जरूरी है। संक्षेप इतना कहना ही काफी होगा कि बचे हुए मराठों के साथ अपने ही भाईयों ने जो विश्वासघात किया था उससे वे पुनः किसी पर भी विश्वास करने की स्थिति में नहीं थे और उन्होंने अपने को छुपाए रखना ही उचित समझा। अब प्रश्न यह उठता है कि वो बचे हुए मराठा ही रोड़ जाति है इसका क्या प्रमाण है?

प्रमाणः-

HISTORY OF RORS

(1) इतिहासकारों के मतानुसार 18वीं सदी की उथल-पुथल में (1761 से 1803 तक का समय) बचे हुए मराठा परिवारों सहित जिन ढाक के जंगलों में विलुप्त हो रहे हैं, उन्हीं ढाक के जंगलों से रोड़ प्रकट हो रहे हैं।

(2) रोड़ों के जितने भी गौत्र (Surname) हैं सारे के सारे हुबहू रायगढ़, कोल्हापुर, शोलापुर, सितारा, साँगली और पुणे (Pune) के क्षेत्र में रहने वाले क्षत्रिय मराठों से मेल खाते हैं। यहाँ उल्लेखनीय है जिन रोड़ों ने अपनी सुविधानुसार अपने मूल गौत्रों में कुछ परिवर्तन करके अन्य जातियों से मिलाने की धृष्टता की है, उनके गौत्र हुबहू क्षत्रिय मराठों से नहीं मिलेगें।

<u>उदाहरणताः-</u>

कादे से कादियान, हुरड़े से हुड्डा, मढ़ से मढ़होत्रा, मैहला से मल्होत्रा, दाबड़े से डाबर, ग्राक से राणा, भाऊ से अत्री, खोकरे से खोखर, चोपडे से चोपड़ा, दन्दयाल से दीनदयाल, कलतगड़िये से काहलो, जोगराण से जागलान, दाहे से दहिया, कल्याणिये से कल्याण, समधाणिये से सम्दान अथवा समध्यान, चव्हाण से चौहान, सगवाल से सांगवान, कल्याणिये से मलिक तक करने से भी नहीं चूके।

(3) गाँव पबनावा में बोदले गौत्र के रोड़ों को मुद्दत्त से फकीर के कहकर बुलाते रहे हैं लेकिन असलियत में वह भी नहीं जानते कि हम फकीर के क्यों कहलाते हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि बोदले नाम के एक संत फकीर शिवाजी के समकालीन हुए हैं, जिसके मन्दिर आज भी महाराष्ट्र में हैं, और बोदले गौत्र के परिवार महाराष्ट्र के केवल सांगली जिले में ही बसे हुए हैं।

(4) समाज शास्त्र के अनुसार ''जाति उन परिवारों के समूह को कहा जाता है जिन की रूचियाँ, रस्में, रीति-रिवाज, तीज-त्यौहार, उद्देश्य, खान-पान, रहन-सहन, शक्लें व स्वभाव एक समान हों और जिन में आपस में वैवाहिक सम्बध स्थापित होते हों'' अब आज की रोड़ बिरादरी की उपरोक्त सभी बातें व गौत्र क्षत्रिय मराठों से मेल खाती हैं, जैसेः- साटे की प्रथा, भैया दूज की कोथली, गोवर्धन पूजा, पौन्ची(रक्षाबन्धन) का त्यौहार न मनाना, मण्डे पर गुलदाना व दाल चावल का खाना, शादी में भण्डारे का मुखिया मामा का होना, भात में मिन्नाई के मोटे-2 लड्डू का रिवाज आज भी मराठों में ज्यों के त्यों प्रचलित हैं। आज के संदर्भ में डा. बसन्त केशव मोरे (जोकि महाराष्ट्र में एक विख्यात इतिहासकार मराठा हैं व जिनके मार्गदर्शन में 57 छात्रों ने Ph.D हासिल की है और जो दक्षिण भारत हिन्दी परिषद के महासचिव हैं और शिवाजी के जीवन चरित्र पर कई पुस्तकों लेखक और महाराष्ट्र राज्य सरकार द्वारा विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित हैं) को जब यह पता चला कि 1761 के बचे हुए रोड़मराठा 6 अप्रैल 2003 को कुरूक्षेत्र में शिवाजी महाराज का जन्मदिन मना रहे हैं, तो वह ई.टी.वी. चैनल की टीम को लेकर 4

अप्रैल को झंझाड़ी गाँव पहुंचे और उन्होंने अपने स्तर पर रोड़ों के कुछ गांवों का सर्वेक्षण किया (झंझाड़ी, जिरबड़ी, अन्जनथली, सांवत, कंवारखेड़ी, दादुपुर खुर्द) और एक वृत्तचित्र तैयार किया जो 8 अप्रैल 2003 को रात 8 बजे ई.टी.वी. चैनल पर प्रसारित हुआ और जिसमें वसंत केशव मोरे का साक्षात्कार भी शामिल था। जिसमें उन्होंने बताया था कि निसंदेह आज के रोड़ 1761 के बचे हुए मराठे ही हैं और अब हमें छत्रपति शिवाजी के पूर्वजों के बारे में रोड़मराठा इतिहास से सही-2 आंकलन करने में मदद मिलेगी, क्योंकि आज तक सारे इतिहासकार शिवाजी के पूर्वजों के बारे में यह तो बता रहे हैं कि वह 13वीं शताब्दी में राजपूताना से आए थे लेकिन सही-सही समय व स्थान का पता तो रोड़मराठा इतिहास से ही लग सकता है। उन्होंने शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर के उपकुलपति से बात करके शिवाजी के पूर्वजों के बारे में शोध पत्रों का विषय (रोड़मराठा इतिहास से सहायता लेकर) तीन पी.एच.डी. छात्रों को दिया है।

रोड़ों को 37वीं कौम के नाम से क्यों जाना जाता हैः-

असल में 1857 के संग्राम के असफल होने के बाद ईस्ट इण्डिया कम्पनी खत्म होने पर हिन्दुस्तान सीधा ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन आ गया था। अंग्रेजों ने भारत पर पूरी तरह काबिज होने के बाद यहां के शासन-प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए सरकारी तन्त्र को विधिवत रूप देना शुरू किया, जिसके तहत 1880 से लेकर 1904 तक भूमि का स्थाई आवंटन किया गया जिसको पक्का बन्दोबस्त के नाम से जाना जाता है। यह सारी प्रक्रिया अंग्रेज अधिकारी मि. डोई की देखरेख में चली थी, तभी से यह कहावत मशहूर है कि 'जो कर गया डोई, क्या करेगा कोई'। भूमि आवंटन का अंग्रेज शासकों ने एक पैमाना यह भी रखा कि भूमि उन्हीं को आबंटित की जाएगी जिन्होंने 1857 के संग्राम में अंग्रेजों की मदद की थी या जो आईने अकबरी में दर्ज क्षत्रिय जाति के थे। उस वक्त उत्तरी भारत में कुल 36 क्षत्रिय जातियां थी। रोड़ जाति उन 36 जातियों में शामिल नहीं थी। **'कल्हण'** द्वारा लिखित **'राजतरंगिणी'** में भी 36 क्षत्रिय जातियां बताई गई हैं। जिसमें रोड़ जाति नहीं हैं **'बाणभट्ट'** की **'हर्षचरित'** में भी रोड़ जाति का नाम नहीं है, जबकि अन्य असंख्य जातियों का वर्णन है। (ब्राह्मण=24 वर्ग, क्षत्रिय=36 वर्ग, वैश्य=48 वर्ग, अन्य पेशेवर जातियां= 108 वर्ग) इसीलिए रोड़ों से वह जमीन छीनी जानी थी, जिस जमीन पर वह पहले से काबिज थे। घरौंडा के बनिया जाति के एक व्यक्ति ने अमीन के रोड़ों को यह बात बताई कि रोड़ों की जमीन अंग्रेज शासक छीन लेगें, क्योंकि वह रोड़ों को क्षत्रिय नहीं मान रहे। तब उसी बनिये ने यह सलाह भी दी कि राजस्थान में कुछ जातियों को वहां के भाटों के कहने पर (क्षत्रिय बताने पर) जमीन मिली है। तो आप भी भाटों से मिलकर अपने आपको क्षत्रिय साबित करवा लो तो शायद रोड़ों को भी जमीन मिल जाएगी। इस बनिये की सलाह पर अमीन गांव के कुछ लोग गांव पधाना के राजपूतों से मिले और उनसे उनके भाटों के बारे में पता किया तथा पधाना गांव के राजपूतों को

लेकर तुंगा राजस्थान गए, वहां जिस भाट से वह मिले उसका नाम जागे था। उससे एक बादली (बावनगढ़ी) वाला इतिहास बनवाया (जो आजकल प्रचलित है) और जमीन लेने में कामयाब हो गए। इस प्रकार रोड़ों को 37वीं कौम के रूप में दर्ज कर दिया गया और इसी आधार पर **''इम्पीरियल गजट''** में यह लिखा गया कि रोड़ों को जमीनें तब मिली जब उन्होंने अपने आपको राजपूतों का वशंज प्रमाणित करवा लिया। **संदर्भः–** The Imperial Gazetteer of India Vol.15, 1908-Page 51 clearly stipulates about Rors as under: (1) Population 42000 approx.(जनसंख्या लगभग 42,000) (2) Land Holding: 17.5% (जमीन का मालिकाना 17.5%) (3) Rors are seemed to have held their lands on being proved as the descendents of Rajputs.(राजपूतों का वंशज प्रमाणित करवाने पर ही रोड़ों को जमीनें दी गईं)(4) All the Rors are Hindus.(सभी रोड़ हिन्दु हैं) जबकि इसी अध्याय में यह भी स्पष्ट किया हुआ है कि बाकि यहां रहने वाली सभी जातियों में, जिनके पास जमीनें हैं, मुसलमान भी काफी संख्या में हैं। सन् 1911 की जनगणना के अनुसार रोड़ों की कुल जनसंख्या लगभग 42,000 थी। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार रोड़ों की जनसंख्या 6,30,000 के करीब है। आंकड़ों की दृष्टि से विगत 90 सालों में रोड़ों की जनसंख्या वृद्धि मोटे तौर पर 15 गुणा बढ़ गई और इसी अनुपात में यदि हम 1761 कालीन समय पर पीछे मुड़कर देखें तो रोड़ों की जनसंख्या कुछ सैंकड़ों के करीब ही बैठती है। इससे यही प्रमाणित होता है कि बहुत कम संख्या में अपनी जान बचाने वाले मराठा योद्धाओं द्वारा गुप्त मन्त्रणा करके अपनी जाति मराठा से छुपाकर रोड़ जाति के रूप में बताना संभव हुआ है।

समाप्त

उपरोक्त सभी बातों और दिए गए तथ्यों एवं संदर्भों को ध्यान में रखकर यदि विचार किया जाए तो रोड़ों के अब तक उपलब्ध इतिहासों (जोकि अलग-2 लोगों द्वारा अलग-2 बताए जाते रहे हैं) में सबसे उचित एवं तर्कसंगत इतिहास यही लगता है बाकि सभी इतिहास तार्किक आधार पर उपयुक्त नहीं लगते। इस बात का पता इस एक बात से ही चल जाता है कि जो लोग रोड़ों को महाभारत काल से जोड़ते हैं अथवा कहते हैं कि रोड़ हजारों सालों से यहां स्थापित हैं वे केवल इसी बात का उत्तर दें कि यदि रोड़ जाति इतनी ही पुरानी है तो फिर हमारी संख्या इतनी कम क्यों है और क्या कारण है रोड़ केवल एक सीमित क्षेत्र (पानीपत से पिपली के बीच) ही क्यों हैं, बाकि देश में रोड़ों का विस्तार क्यों नहीं हुआ। जबकि बाकि सभी पुरानी जातियों की संख्या हमसे कई गुणा है और वे सभी जातियां आज पूरे देश में फैली हुई हैं जबकि रोड़ जाति का एक भी

परिवार इस सीमित क्षेत्र से बाहर नहीं मिलेगा और यदि होगा भी तो वह भी इसी क्षेत्र (पानीपत से कुरूक्षेत्र के बीच का क्षेत्र) से गया होगा।

इस प्रकार के अन्य भी बहुत से प्रश्न बनते हैं जिनका जवाब पहले के इतिहासों में नहीं मिलता लेकिन उपरोक्त इतिहास में इस प्रकार के सभी प्रश्नों का उत्तर मिलता है।